ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218
PP. NO.- 365-368
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

राजनीति एवं सामाजिक आयामों में अंतःसम्बन्ध एक विश्लेषण

डॉ0 नौमी प्रिया
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, सम्भल (उ0प्र0) भारत

Received-17.6.2019, Revised-23.6.2019, Accepted-29.06.2019 E-mail : drnpriya73@gmail.com

सारांश – *राजनीति मानव क्रियाओं की तर्कसंगत एवं संगठित अभिव्यक्ति है, जो समाज को दशा एवं दिशा निर्धारित करती है। राजनीति शून्य में नहीं बल्कि समाज में होती है, इसलिए सामाजिक पहलुओं यथा समूह, वर्ग, जाति, धर्म, लिंग, क्षेत्र, नातेदारी एवं भाषा का राजनीति पर व राजनीति का इन सामाजिक पहलुओं पर गहरा प्रभाव पड़ता है। सामाजिक आयामों के कारण ही विश्व में अलग–अलग राजनीतिक व्यवस्था व राजनीतिक गतिविधियाँ देखी जा सकती है। अतः कहा जा सकता है कि राजनीति का समाज से व समाज का राजनीति से अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।*

कुंजीभूत शब्द– राजनीति, परिवार, नातेदारी, वर्ग, जाति, धर्म, सम्प्रदायिकता, राजनीतिक सहभागिता, क्षेत्रीयता

राजनीति मानव चेतना की सर्वाधिक तार्किक एवं संगठित व्यवहार की अभिव्यक्ति है, जो विश्व के समस्त समाजों में सक्रिय है। यह सम्भव है कि इस सक्रियता की प्रकृति एवं गति भिन्न–भिन्न हो। लेकिन कोई भी ऐसा समाज नहीं है जहाँ राजनीति न होती हो। ऐसी स्थिति में यदि यह कहा जाए कि राजनीति एक सर्वकालिक व सर्वव्यापी व्यवहार है, तो अतिश्योक्ति नहीं होगीं। समाज से राज्य की ओर शक्ति का सकेन्द्रन इसका प्रमाण है। राजनीति की बढ़ती हुई महत्ता के कारण राजनीतिशास्त्र के साथ–साथ राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास सम्भव हुआ, जिसके अंतर्गत राजनीति के सामाजिक पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। समाज एव राजनीति के इस अंतःसम्बन्ध के कारण समाजशास्त्री, राजनीतिक चिंतक व राजनीतिशास्त्री सामाजिक चिंतक प्रतीत होने लगते हैं। उदाहरण के लिए ताकविले, कार्ल मार्क्स, विलफ्रेडो, पैरेटो, जी0 मोस्का, मैक्स वेबर ऐसे विचारक हैं, जो समाजशास्त्र एवं राजनीतिशास्त्र दोनों ही विषयों में स्वीकार्य है, इसी बात को दृष्टिगत लिपावशकी[1] का कथन है "19वी शताब्दी के अंतिम वर्षों में प्रमुख राजनीति शास्त्री, राजनीतिक समाजशास्त्री या, समाजशास्त्रीय राजनीतिशास्त्री थे। येल एवं कोलम्बिया विश्वविद्यालयों में विभागों के नाम तक राजनीति एवं सामाजिक विज्ञान विभाग थे तथा प्रोफेसर के पदों पर नियुक्ति ऐसे विद्वानों की होती थी, जो कि प्रथमतः राजनीतिशास्त्री थे।" दूसरी ओर अनेक विद्वान जिन्होंने राजनीतिशास्त्र में अनेक मुलभूत अवधारणाओं एवं विधियों का विकास किया वे समाजशास्त्री थे। ए0 के0 मुखोपाध्याय[2] का भी विचार है कि "समाज का राजनीति पर व राजनीति का समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।" अतः कहा जा सकता है कि राजनीति को तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक हम सामाजिक व्यवस्था को नहीं समझ लेते।

प्रस्तुत लेख में राजनीति एवं सामाजिक आयामों के अतःसम्बन्धों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

राजनीति शक्ति की तलाश है। दूसरे शब्दों में राजनीति का केन्द्रीय विषय शक्ति संघर्ष है, लेकिन संघर्ष का आधार या कारण सामाजिक ही होता है। यही कारण है कि समाजशास्त्री राज्य को अन्य सामाजिक समूहों की तरह एक समूह ही मानते हैं। जब हम राजनीतिक क्रिया–कलाप यथा राजनीतिक सामाजीकरण, राजनीतिक सहभागिता, राजनीतिक भर्ती, राजनीतिक संस्कृति का विश्लेषण करते हैं तो उसका आधार सामाजिक ही होता है।

समाज एक जटिल व्यवस्था है, जिसके कई आयाम होते हैं। इन आयामों में वर्ग, जाति, लिंग, आयु, धर्म, नातेदारी, क्षेत्र भाषा एवं शिक्षा, महत्वपूर्ण है। राजनीतिक गतिविधियों पर इन साममाजिक आयामों का तथा इन आयामों पर राजनीति का क्या प्रभाव पड़ता है। इसका विश्लेषण संक्षेप में निम्नवत हैं:–

टॉलकॉट पारसन्स[3] ने सामाजिक संरचनाओं की उत्पत्ति ही विभिन्न कर्ताओं की भूमिकाओं से मानते हैं। दूसरे शब्दों में सामाजिक प्रक्रिया को निश्चित रूपरेखा देने वाली इकाइयों में राजनीतिक पद्धति सर्वाधिक महत्वपूर्ण उप पद्धति है। इसका कारण यह है कि राजनीतिक व्यवस्था सामाजिक व्यवस्था के अधीन होते हुए भी सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था तथा उसकी अन्य उप व्यवस्थाओं को प्रभावित करती है। सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत राजनीतिक व्यवस्था की विशिष्टता इस बात से भी स्पष्ट हो जाती है कि यह सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर अधिकारिक नियंत्रण का प्रयोग करती है। पारसन्स के शब्दों में यह उद्देश्यपरक कार्यों का सम्पांदन करती है। जहाँ तक राजनीतिक व्यवस्था के संरचनात्मक पहलू का प्रश्न है तो विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका जैसे औपचारिक राजनीतिक संस्थाओं के अतिक्ति राजनीतिक दल,, हित या दबाव समूह जैसी अनौपचारिक राजनीतिक तत्व इसके मुख्य अंग है।

राजनीति एवं सामाजिक आयामों के अंतःसम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिए सामाजिक समूह वर्ग, प्रस्थिति, धर्म के साथ राजनीतिक प्रक्रियाओं के सम्बन्ध को स्पष्ट करना होगा।

समूह से मनुष्य के उस समष्टि का बोध होता है, जिसमें कुछ लोग अपने सामान्य हितों या उद्देश्यों के कारण आपस में जूड़े होते हैं तथा हितों एवं उद्देश्यों

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

के आधार पर वे आपस में एकता का अनुभव करते हैं। अगर ऐसा समूह किसी विशेष संगठन के आधार पर अपने उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहता है, तो यह समूह संघ बन जाता है। पुनः वह अपने हितों के आधार पर संगठित होकर सरकार पर दबाव डालने लगता है, तो उसे हित समूह या दबाव समूह कहा जाता है। इस प्रकार सामाजिक समूह राजनीतिक गतिविधियों को सम्पादित करती है। प्राथमिक समूहों में परिवार, मित्र–मंडण्ली आते हैं, जिनका व्यक्ति के राजनीतिक व्यवहार पर व्यापक असर पड़ता है, क्योंकि राजनीतिक सामाजीकरण का प्रथम श्रोत परिवार या मित्र मण्डली ही होता है। परिवार में बच्चों का जिस ढंग से लालन–पालन होता है युवावस्था में उसके राजनीतिक दृष्टिकोण पर वैसा ही प्रभाव दिखाई देता है। राबर्ट लेन[4] ने अपने अध्ययन में पाया कि जिस परिवार में बच्चों को पारिवारिक कार्यों में भाग लेने का ज्यादा अवसर मिलता है, उन परिवारों के बच्चों में राजनीतिक प्रभावशीलता तथा राजनीतिक सहभागिता की मात्रा अधिक होती है। इसके विपरीत जिन परिवारों की प्रवृत्ति सतावादी होती है तथा जिनमें बच्चों को स्वतंत्र होकर बोलने तथा पारिवारिक कार्यों में स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेने का अवसर नहीं दिया जाता है, वैसे बच्चें वयस्क होने पर राजनीतिक उदासीनता का प्रदर्शन करते हैं। साथ–ही–साथ मित्र–मण्डली एवं संदर्भ समूह का प्रभाव भी व्यक्ति के राजनीतिक विचार एवं क्रियाकलाप पर पड़ता है। वर्गीय हित, नृजातीयता, सामूहिक हित आदि की भावना समूह में ही निर्मित होती है।

सामाजिक आयाम के रूप में वर्ग का विशेष महत्व है। सत्य तो यह है कि मानव एक वर्गीय प्राणी है। अतः वर्ग का राजनीति पर व्यापक प्रभाव पड़ता है जैसा कि जे.शुम्पीटर[5] का कथन है– "प्रत्येक सामाजिक प्रस्थिति पूर्व घटित परिस्थितियों की उपज या उनकी वसीयत है तथा यह परिस्थिति पूर्व घटित परिस्थितियों से न केवल उनकी संस्कृति, उनकी स्वभाविक प्रवृत्तियों तथा उनके आत्मबोध को ही वसीयत में पाती है, बल्कि उन सामाजिक संरचना के तत्वों तथा उनके अंतर्गत शक्तियों के केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति को भी वसीयत के रूप में पाती है। अर्थात वर्ग मनुष्यों का एक समूह मात्र नहीं बल्कि उससे कुछ ज्यादा है। वर्ग अपने स्वबोध के प्रति सचेत रहता है। उसी स्वबोध के अनुसार अपने–आप को ढालता है। यही कारण कि वर्ग के सदस्य एक–दूसरे के प्रति ऐसा व्यवहार करते हैं, जो अन्य वर्ग के सदसयों के प्रति उनके व्यवहार से भिन्न होते हैं। एक वर्ग के सदस्य अपने वर्ग के सदस्यों से निकटता तथा दूसरे वर्ग के सदस्यों से दूरी बनाते है। यही कारण की राजनीति का केन्द्र वर्गीयहित है। कार्ल मार्क्स एवं ऐजेल्स[6] ने इसी आधार पर 'बुर्जुआ' व 'सर्वहारा' वर्ग के रूप में वर्गीकरण किया और कहा कि "दुनिया का इतिहास, वर्ग संघर्ष का इतिहास है।" सर्वहारा वर्ग शक्तिविहीन होने के नाते गुलामी तथा बुर्जआ वर्ग शक्तिशाली होने के नाते शासक वर्ग की भूमिका में होता है। वर्गीय चरित्र के आधार पर ही राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता है। कहने का अभिप्राय यह है कि जिस समाज में जिस वर्ग की प्रधानता होती है वहाँ की राजनीति में उसी का आधिपत्य होता है और उसी के आधार पर राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति समाजवादी या पूँजीवादी होगी।

वर्ग के आधार पर ही विलफ्रेडो परेटो ने समाज को अभिजन एवं आमजन तथा अभिजन को पुनः शासकीय एवं गैर शासकीय अभिजन में विभाजित किया है। पीटर मर्कल[7] ने 1817 से 1918 के बीच जर्मनी में वर्ग का राजनीतिक प्रक्रियाओं पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन में पाया कि श्रमिक वर्ग के बच्चों को प्राम्भिक शिक्षा अनुदारवादी वातावरण में होता था, जिस पर जर्मन संस्कृति एवं धर्म का विशेष प्रभाव था, जिसके कारण ऐसे बच्चे युवा होने पर अपनी आजीविका के लिए श्रम या छोटे दुकानदारी पर निर्भर रहते थे। सामान्यतः उनकी आजीविका अस्थायी होने के कारण उन्हें भ्रमण तथा संघर्ष करना पड़ता था। परिणाम स्वरूप उनमें श्रमिक वर्ग के प्रति साहनुभूति तथा जर्मन बुर्जुआ वर्ग के प्रति स्वभाविक घृणा या अविश्वास होता था। दूसरी ओर जर्मन बुर्जुआ वर्ग के बच्चे अभिजात स्कूलों में पढ़ते थे तथा उनके माता–पिता राजनीति को हीन कार्य मानकर उन्हें इनमें भाग लेने से माना करते थे। परिणामतः ऐसे बच्चे युवा अवस्था में राजनीति से उदासीन हो जाते थे। यही कारण है कि श्रमिक वर्ग के लोंगों में राजनतिक सहभागिता बुर्जुआ वर्ग के लोगों की तुलना में अधिक थी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जर्मनी के अधिकांश राजनीतिज्ञ श्रमिक वर्ग से रहे हैं।

जाति विशेषकर भारत में जाति एवं राजनीति में अंतरंग सम्बन्ध है। यही कारण है कि रजनी कोठारी[8] ने कहा है– "जाति राजनीति की धूरी है।" अधिकांश राजनीतिक क्रियाएँ यथा उम्मीदवारों का चयन, मंत्रीमंडल का गठन, नीतियों का निर्माण, राजनीतिक दलो का गठन, राजनीतिक भर्ती, मतदान व्यवहार जाति आदि से प्रभाव होती है। यही कारण है कि कुछ लोग "राजनीति में जातिवाद" तथा कुछ "जातियों की राजनीतिकरण" की संज्ञा देते है।

इस प्रकार राजनीति जाति को व जाति राजनीति को प्रभावित करती है।

सामाजिक आयामों में नातेदारी भी राजनीति को प्रभावित करती है। नातेदारी से अभिप्रयः ऐसे व्यक्तियों के परस्पर सम्बन्धों की व्यवस्था से है, जो विवाह एवं रक्त सम्बन्धों के आधार पर परस्पर सम्बन्धित है। वैसे भारत में नातेदारी एवं राजनीतिक सम्बन्ध पर विशेष अध्ययन नहीं हुए है, क्योंकि भारतीय राजनीति में परिवार व जाति ज्यादा प्रभावशाली आयाम माना जाता है। लेकिन सूक्ष्म रूप से अवलोकन करने पर पता चलता है कि जाति के अंतर्गत नातेदारी भी

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

राजनीति को प्रभावित करती है, क्योंकि अधिकांश नातेदार अपनी ही जाति के होते है। नातेदारी शक्ति प्राप्ति का एक स्रोत है।

भारतीय राजनीति में "परिवारवाद" की प्रवृत्ति तेजी से उभरी है। सत्य तो यह है कि पूरे देश की राजनीति अधिकतम चार–पाँच सौ परिवारों के ईर्द–गिर्द ही घूमती है। परिवारवाद विकसित होने का मूल कारण शक्ति की संचयात्मक प्रकृति है। जब एक बार किसी परिवार के पास सत्ता और शक्ति आ जाती है, तो वह धीरे–धीरे बढ़ती ही जाती है। भारत में नेहरू परिवार, तमिलनाडु में करूणानिधि का परिवार, महाराष्ट्र में शरद पवार का परिवार, मध्य प्रदेश में सिंधिया परिवार, उत्तर प्रदेश में मुलायम सिंह यादव का परिवार, बिहार में लालू प्रसाद का परिवार, जम्मू एवं काश्मीर में फारूख अब्दुल्ला का परिवार इसका ज्वलंत उदाहरण है।

राजनीति को प्रभावित करने वाले तत्वों में धर्म एक महत्वपूर्ण आयाम है। जैसा कि डॉ0 राम मनोहर लोहिया ने इतिहास चक्र में लिखा है– "धर्म दीर्घकालिक राजनीति है और राजनीति अल्पकालिक धर्म है।" धर्म के आधार पर ही सम्प्रदायिकता का निर्माण होता है, जो विश्व के प्रत्येक देश विशेषकर भारतीय राजनीति को प्रभावित करता है। सम्प्रदायिकता के कारण ही अल्पसंख्य बहुसंख्यक की राजनीति शुरू हुई। भारत में मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा, अकाली दल आदि राजनीतिक दालों का गठन धर्म के ही आधार पर हुआ।

मेरिस जोन्स के शब्दों में यदि सम्प्रदायिकता को व्यापक अर्थ में लिया जाए तो सभी दलों में किसी–न–किसी स्तर पर और कुछ न कुछ मात्रा में सम्प्रदायिकता अवश्य देखी जा सकती है। अयोध्या, बाबरी मस्जिद प्रकरण के पश्चात भारतीय राजनीति में धर्म सम्प्रदाय की भूमिका बढ़ती जा रही है। हिन्दू, मुस्लिम के नाम पर राजनीतिक ध्रूवीकरण तीव्र हो रहा है। धार्मिक मठाधीशों, साधुसंतों की गतिविधियाँ राजनीतिक होती जा रही है। राजनीतिक मुद्दे एवं विमर्श भी धर्म एवं सम्प्रदाय के इर्दगिर्द खड़ी की जा रही है। धर्मगुरूओं द्वारा राजनीतिक अपील व इमामों द्वारा फतवा जारी करना आम बात है। आज़ाद भारत में खालीस्तान की भाँग सम्प्रदायिकता एवं धार्मिक राजनीति का ज्वलंत उदाहरण है। वर्तमान में हिन्दू राष्ट्र की स्थापन की मांग करना राजनीति में धार्मिक उन्माद ही माना जायेगा। उम्मीदवारों का चयन, मतदान व्यवहार, मंत्रीमंडल का गठन इत्यादि में धर्म की भूमिका स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। यूरोप में भी ईसाई धर्म के अंतर्गत प्रोटेस्टेंट एवं कैथोलिक की राजनीति देखी जा सकती है। प्रोटेस्टेंट, मतावलम्बी जहाँ पूँजीवादी राजनीति का समर्थन करते है वही कैथोलिक समाजवादी विचार अर्थात मजदूर दल का समर्थन करते हुए दिखते हैं। धर्म की राजनीति की प्रतिक्रिया में धर्म–निरपेक्षता की धारणा का विकास हुआ।

प्रोटेंस्टेंट राजनीतिक गतिविधियों में शिक्षा की भूमिका भी महत्वपूर्ण मानी जाती है। लोकतंत्र की सफलता के लिए शिक्षा एक आवश्यक शर्त मानी जाती है क्योंकि शिक्षा के कारण लोगों में जागरूकता आती है और जागरूकता के कारण लोगों में राजनीतिक समझदारी बढ़ती है। जिस देश के लोग उच्च शिक्षित होते हैं वहाँ राजनीतिक सुचिता एवं सहभागिता अधिक होती है। दूसरी ओर शिक्षा की कमी के कारण लोगों में राजनीतिक उदासीनता आती है। शिक्षित व्यक्ति ही अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का निर्वहन समुचित रूप से कर सकते हैं।

लिंग भी राजनीतिक को प्रभावित करती है। सामान्यतः महिलाओं की तुलना में पुरूषों में राजनीतिक सहभागिता अधिक होती है। लेकिन बर्तमान में महिलाओं में भी राजनीतिक जागरूकता बढ़ रही है और वे मतदान से लेकर उम्मीदवार बनना व मंत्रीमण्डल में भागीदारी की बात करने लगी है। पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत का आरक्षण तथा लोकसभा चुनाव हेतु महिला आरक्षण की मांग इसका ज्वलंत उदाहरण है। यद्यपि मतदान में महिलाओं की सहभागिता पुरूषों के बराबर या कहीं–कहीं उससे अधिक हो रही है लेकिन नीतिनिर्माण में उनकी भूमिका अभी भी पुरूषों की तुलना में कम है। यहीं कारण है कि प्रत्येक राजनीतिक दल महिला सशक्तीकरण को चुनावी मुद्दा बना कर उन्हें अपने समर्थन में लाने का प्रयास करते रहते है। नीति एवं योजनाओं के निर्धारण में भी लिंग को ध्यान में रखा जाता है।

भारत में भाषाई विविधता है। भाषाई विविधता के कारण राष्ट्रीय एकता प्रभावित होती है। भाषा के आधार पर संकीर्ताएं विकसित हुई। गैर हिन्दी राज्यों में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने का निरंतर विरोध किया जाने लगा। पंजाब, पश्चिम बंगाल, आसाम, तमिलनाडु आदि राज्यों में हिन्दी भाषा को स्वीकार न करके क्रमशः पंजाबी, बंगाली, असमिया व तमिल को राज्य की सरकारी भाषा बनाया गया। तामिलनाडु की राजनीति में हिन्दी विरोध एक महत्वपूर्ण राजनीतिक मुद्दा बना।

वैसे तो राजनीति संगठित अभिव्यक्ति है लेकिन क्षेत्रीयता की भावना भी भारतीय राजनीति का एक आवश्यक तत्व बना हुआ है। क्षेत्रीयता के आधार पर गोरखालैण्ड खालिस्तान, झारखंण्ड, छतीसगढ़, उत्तराखण्ड आंदोलन के फलस्वरूप नये–नये राज्यों का निर्माण हुआ। द्रविड़ आंदोलन के नाम पर डी0एम0के0 अन्ना डी0एम0के0, अकाली दल आदि की राजनीति हो रही है। क्षेत्रीयता की भावना के कारण ही हरियाण, पंजाब का विभाजन सम्भव हुआ है। क्षेत्रीयता के आधार पर ही उत्तर एवं दक्षिण भारत का राजनीति में अंतर देखा जा सकता है।

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

उक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि राजनीति अपने–आप में स्वतंत्र–चर नहीं है बल्कि वह सामाजिक आयामों द्वारा प्रभावित होती है। इन सामाजिक आयामों में परिवार, नातेदारी समूह, वर्ग, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, शिक्षा एवं लिंग महत्वपूर्ण हैं। लेकिन राजनीति जिन सामाजिक आयामों से नियंत्रित एवं निर्देशित होती है, उन्हें नियंत्रित और निर्देशित भी करती है। अतः कहा जा सकता है कि राजनीति का समाजिक संरचना से सामाजिक संरचना का राजनीति से अंतः सम्बन्ध एवं अंतः निर्भरता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. लिपावस्की ए., दि पोलिटिक्स ऑफ एपिस्टमोलोजी'' प्रोसिडिंग्स ऑफ दि वेस्टर्न पोलिटिकल सांईस एसोसिएशन (सप्लीमेंट टू दि वेस्टर्न पोलिकटकल क्वाटरली, सितम्बर 17, 1964, पृष्ठ– 32
2. ए.के. मुखोपाध्याय, पोलिटिकल सोशियोलॉजी के. पी. बांगची एण्ड कम्पनी कलकत्ता 1977, पृ0सं0– 11
3. टी. पारसन्स इन आर. यंग (इडिटेड) एप्रोचेज टू द स्टडी ऑफ पेालिटिक्स इलीनोयास नार्थ वेर्स्टन यू. पी. 1957, पृष्ठ– 282–301
4. राबर्ट लेन पोलिटिकल लाइफ, फ्री प्रेस न्यू यार्क 1965, पृष्ठ सं.–15
5. जे0 सुम्पीटर– ''द प्रोब्लम ऑफ क्लासेज'' इन आर0 वेंडिग्स एण्ड एस0एम0 लिप्सेट इडिटेड क्लास स्टेटस एण्ड पावर, फ्री प्रेस न्यू यार्क 1965, पुष्ठ सं.– 75–81
6. कार्य मार्क्स एवं ऐंजेल्स– कम्यूनिस्ट मेनीफेस्टों फॉरेन लैंग्वेज पब्लिसिंग हाउस मास्को 1850, पृष्ट सं.– 42
7. पीटर मर्कल–मॉडर्न कम्परेटिव पोलिटिक्स, हॉर्ट रेनहॉर्ट न्यू यार्क 1970, पृष्ट सं.– 128–130
8. रजनी कोठारी 'कास्ट इन इंडियन पोलिटिक्स' ओरियंट लॉग मैन, दिल्ली 1970, पृष्ट सं.–29

*****